स्त्री सुरक्षा और महिला थाना

स्त्री सुरक्षा की दिशा में महिला थाना का विशिष्ट गठन स्वाभाविक रूप से ध्यान खींचता है – अपने अनूठे नाम से भी और खालिस स्त्रीवादी स्वरूप के चलते भी। इस वर्ष रक्षाबंधन पर हरियाणा की मनोहर लाल सरकार ने राज्य की बहनों के लिए सुरक्षा-शालीनता की सौगात के रूप में हर जिले में एक महिला थाना खोलने की तत्परता दिखायी है। इस कवायद में, बेशक, घोर पितृसत्तात्मक संगठन आरएसएस के प्रचारक रहे इस मुख्यमंत्री की महिलाओं की अपमानजनक स्थिति को बेहतर करने की सदिच्छा झलकती है। हालाँकि, व्यवहार में एक विशुद्ध मर्दवादी, अन्यत्र असफल.सिद्ध यह रणनीति स्त्रियों को पूर्णतया हताश ही करेगी। जैसा कि अब तक के अन्य बहुतेरे मर्दवादी स्त्री.सुरक्षा उपायों का हश्र रहा है, स्त्री की विवश.आरोपित छवि ही इन महिला थानों के माध्यम से भी मजबूत होने जा रही है न कि स्त्री स्वयं।

एक तरह से सरकार ने स्वीकार किया है कि मौजूदा स्वरूप में पुलिस केन्द्रों का लैंगिक माहौल सुधारा नहीं जा सकता। चंद हफ्तों पहले स्वयं मुख्यमंत्री के क्षेत्र करनाल के विशाल मधुबन पुलिस परिसर में कार्यरत करीब आधा दर्जन महिला पुलिसकर्मियों को भी विभागीय लैंगिक उत्पीड़न पर सार्वजनिक रूप से रोष व्यक्त करना पड़ा था। खेलों से जुड़ी इन लड़कियों ने लिखित रूप से उनके यौन शोषण के प्रयासों का खुलासा किया। आरोप के घेरे में वरिष्ठ अधिकारी थे जो उनकी प्रशासनिक विवशताओं के चलते इस हाथ ले उस हाथ दे वाले खेल में सिद्धहस्त थे। कई आरोपियों के विरुद्ध जांच व अनुशासनिक कार्यवाही शुरू हुयी है लेकिन मूल मुद्दा, कार्यस्थल पर महिला संवेदी लैंगिक प्रोटोकॉल का निर्वहन अछूता रहा। क्या अंदाजा लगाना मुश्किल है कि ऐसे राजनीतिक.पुलिस नेतृत्व के लिए सामान्य थानों के माहौल को आम स्त्री के लिए लिंग.संवेदी कर पाना कितनी टेढ़ी खीर साबित होगा।

महिला थाना का गठन और कुछ नहीं इसी मर्दवादी उलझन का विस्तार जैसा है। सोचिये, यदि जिले-भर में स्त्रियों को मात्र एक ही पुलिस थाना उपलब्ध हो तो क्या इसका मतलब यह भी नहीं कि बाकी थानों के दरवाजे उनके लिए बंद कर दिए गए हैं। हरियाणा के करीब तीन सौ थानों में से नयी व्यवस्था में केवल इक्कीस थाने आधी आबादी को उपलब्ध होंगे। जबकि बड़ी संख्या में थाने खोले ही जनता की सुविधा के लिए जाते हैं ताकि हर जरूरतमंद की पुलिस तक त्वरित पहुँच संभव हो सके। इसके लिए सौ वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल और एक लाख की जनसंख्या सर्व.प्रयुक्त मानक माने जाते हैं, जिससे अपराध और अपराधी पुलिस राडार पर बिना समय गंवाए लाये जा सकें। क्या पुलिस संख्या के भौगोलिक.सामरिक विस्तार की सुविधा केवल पुरुषों को ही चाहिए, स्त्रियों को नहीं, यही नहीं आपराधिक मामलों में स्त्रियाँ केवल पीड़ित की हैसियत से ही तो थानों में नहीं आती वे आरोपी और गवाह भी होती हैं –और ऐसे भी मसलों में उनका वास्ता थानों से पड़ता है जहां शिकायतकर्ता कोई पुरुष हो। फिर समाज में तमाम तरह के अंधे.अबूझ अपराध भी होते हैं जहां शुरू में पता ही नहीं होता कि संदेह के घेरे में कौन है । महिला या पुरुष, बहुतेरे अपराधों में दोनों ही लिंग वाले शामिल होते हैं। इन मामलों में महिला थानों की भूमिका बनेगी या सामान्य थानों की, यही नहीं महिलाओं को भी पुरुषों की भांति सत्यापन, गुमशुदा, धरना.प्रदर्शन, पैरवी, घरेलू.वैवाहिक या अन्य विविध सिलसिलों में भी आवेदनकर्ता के रूप में थानों में आना होता है। वे क्यों दूर के तयशुदा महिला थाने में बेवजह धक्के खाने पर मजबूर की जाएं ।

दरअसल व्यावहारिक धरातल पर महिला थाना स्त्री के लिए घोर असुविधा का जनक है। तमिलनाडु या उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों में जहां महिला थाना प्रयोग व्यापक रूप से आजमाया गया, इन थानों की महिला अपराधों से निपटने की भूमिका उत्तरोत्तर सीमित होती गयी है। अधिकांशत: ये पति.पत्नी विवाद निपटारे के विशेष सेल या महिला पुलिसकर्मियों के शरणस्थल जैसे बन कर रह गए हैं न कि आपराधिक विवेचना के मानक केंद्र। पूर्वी उत्तर प्रदेश के आजमगढ़ में हाल में जेंडर वर्कशॉप के दौरान वहां की महिला थानाध्यक्ष ने दूर.दराज की महिलाओं की दर्जनों भौगोलिक एवं प्रशासनिक परेशानियाँ सिलसिलेवार बयान की, आश्चर्य नहीं कि हरियाणा के नव-स्थापित महिला थानों में भी तमाम वैसी ही दिक्कतें पहले दिन से सतह पर आनी शुरू हो गयी हैं। एक निरुपाय महिला पड़ोस के पुलिस थाने में राहत की गुहार के साथ पहुँचती है और उसे बीसियों.तीसियों किलोमीटर दूर स्थित

वाहवाही लूटने की जल्दी में यह सोचा ही नहीं गया कि महिला थानों को चलाने के लिए वांछित संख्या में महिला पुलिसकर्मियों को कहां से लाया जायेगा, लिहाजा जिलों में जैसे तैसे अपना काम चला पा रहे पुलिस के महिला प्रकोष्ठों को समेट कर इन नए बने थानों को स्थापित किया गया है। तमाम महिला प्रकोष्ठ एक तरह से पारिवारिक कलह निपटाने के मंच की तरह स्वीकृत हो चुके हैं और इनका एकबारगी ठप्प होना मानो सामाजिक शून्य पैदा करने जैसा ही हुआ। इसी तरह, सामान्य थानों में महिलाकर्मी पहले से ही कम थे, उन्हें और भी कम करना पड़ा है ताकि महिला थानों में तैनाती पूरी की जा सके। यानी अब सामान्य पुलिस थाने स्त्रियों के लिए और भी असुविधाजनक बना दिए गये हैं।

महिला थाने का रास्ता दिखा दिया जाता है। जबकि विधि स्थापित प्रक्रिया के अनुसार अपराध की सूचना मिलते ही कानून का पहिया घूमना चाहिए और शिकायतकर्ता किसी भी थाने में जाय उसे क्षेत्राधिकार के आधार पर ठुकराया नहीं जा सकता। इस लिहाज से भी महिला थानों का वर्तमान गठन सर्वोच्च एवं तमाम उच्च न्यायालयों की स्थापनाओं का सरासर उल्लंघन है।

अब सरकारी सफाई में कहा जा रहा है कि महिलायें अपनी शिकायत लेकर करीब के सामान्य थाने में जाने को भी स्वतंत्र हैं। यदि ऐसा है तो अलग से महिला थाने बनाये ही क्यों गए, न्यायिक मैजिस्ट्रेट और अस्पताल भी पुलिस अनुसन्धान कार्य से अनिवार्य रूप से नत्थी होते हैं। महिला थाना बनने से उनके क्षेत्राधिकार न बदले हैं, न ही बदले जा सकते हैं। इसका मतलब है पीड़ित, गवाह, आरोपी, हर भूमिका में महिला के हिस्से में और धक्के ! जैसी मर्दवादी सोच से यह शुरूआत हुयी है उसका एक नमूना इन थानों की अपनी सुरक्षा व्यवस्था में अब भी पुरुषों की भूमिका के जारी रहने से लग जाता है। फरीदाबाद में उद्घाटन के दिन ही एक वरिष्ठ पुरुष पुलिस इन्स्पेक्टर की तिरस्कार.भरी टिप्पणी सुनने को मिली- इनकी सुरक्षा के लिए अब अतिरिक्त गश्त और लगानी पड़ा करेगी ! गुडगाँव महिला थाना इंचार्ज के मुताबिक सामान्य थानों में पुरुष पुलिसकर्मी की उपस्थिति वहां आने वाली स्त्रियों को असहज करती थी, अब ऐसा नहीं होगा। इतना जटिल मुद्दा और उसके निदान का इतना सरल समीकरण !

स्त्रियों को सशक्त करने के नजरिये से जरूरत थी जिले के हर पुलिस थाने के इंफ्रास्ट्रक्चर और मानव.संसाधन को महिला संवेदी बनाने की। साथ ही हर पुलिसकर्मी को लिंग संवेदी होने की पूर्वशर्त में बांधने की। दूसरे शब्दों में हर थाना, महिला थाना बनाया जाना चाहिए था। लेकिन भवन.डिजाईन, मानव.संसाधन और प्रशिक्षण.अनुकूलन जैसे स्त्री को सशक्त कर सकने वाले महत्वपूर्ण आयामों को दरकिनार कर, महिला थाना मात्र को राम.बाण की तरह प्रचारित किया गया। स्त्री शालीनता के भावनात्मक तर्क की ओट में खड़े होकर हरियाणा सरकार ने भी यही सिद्ध किया है कि राखी पर बहनों को सदिच्छा की ही सौगात दी जा सकती है, न कि वास्तव में सुरक्षा और शालीनता की गारंटी।

वाहवाही लूटने की जल्दी में यह सोचा ही नहीं गया कि महिला थानों को चलाने के लिए वांछित संख्या में महिला पुलिसकर्मियों को कहां से लाया जायेगा, लिहाजा जिलों में जैसे तैसे अपना काम चला पा रहे पुलिस के महिला प्रकोष्ठों को समेट कर इन नए बने थानों को स्थापित किया गया है। तमाम महिला प्रकोष्ठ एक तरह से पारिवारिक कलह निपटाने के मंच की तरह स्वीकृत हो चुके हैं और इनका एकबारगी ठप्प होना मानो सामाजिक शून्य पैदा करने जैसा ही हुआ। इसी तरह, सामान्य थानों में महिलाकर्मी पहले से ही कम थे, उन्हें और भी कम करना पड़ा है ताकि महिला थानों में तैनाती पूरी की जा सके। यानी अब सामान्य पुलिस थाने स्त्रियों के लिए और भी असुविधाजनक बना दिए गये हैं। इस क्रम में हरियाणा सरकार ने एक हजार नयी महिला पुलिसकर्मियों की भर्ती प्रक्रिया शुरू की है जिन्हें चयनित करने और प्रशिक्षण देने में कम से कम पंद्रह महीने तो लगेंगे ही। हालाँकि यह संख्या भी ऊँट के मुंह में जीरा जैसी ही साबित होगी। फ्लिहाल राज्य में महिला पुलिसकर्मियों का अनुपात खींच.तान कर सात प्रतिशत के गिर्द लाया जा सका है। वर्तमान रफ्तार से यह कुछ खास बदलने नहीं जा रहा। जबकि कुछ वर्षों से केंद्र की घोषित नीति पुलिस बलों में महिला अनुपात को तीस प्रतिशत तक बढाने की रही है, तब भी राष्ट्रीय अनुपात छह प्रतिशत के आस.पास ही चल रहा है। अब तक सिर्फ एक दर्जन राज्यों ने नयी भर्ती में तीस प्रतिशत की नीति अपनाई है-जिनमें बिहार और तेलंगाना ;पैंतीस प्रतिशत अग्रणी हैं। हरियाणा उन राज्यों में है जिनकी महिला पुलिस की संख्या के विषय में कोई स्पष्ट नीति नहीं है। दरअसल, खाप मूल्यों से संचालित पुरुष.प्रधान ग्रामीण समाज वाले इस राज्य में पुरुषों को ही सरकारी नौकरियों में भर्ती करना राजनीतिक रूप से लाभप्रद समझा जाना स्वाभाविक रहा है। जाहिर है, राजनीतिक इच्छा शक्ति के अभाव में राज्य में महिला पुलिस अनुपात को कामकाजी स्तर तक लाने में वर्षों नहीं दशकों लगेंगे।

एकमात्र स्त्री.विरुद्ध अपराधों को ही महिला पुलिस थानों के अधिकार क्षेत्र में लाना न केवल अव्यवहारिक ही सिद्ध हुआ है बल्कि यह महिला पुलिसकर्मियों के मनोबल को तोड़ने वाला कदम भी है। दरअसल इस मर्दवादी पड़ाव से आप बहुत कुछ नेगेटिव ही कह रहे होते हैं। महिला थानों की स्थापना का जो भी सन्देश बनता हो, क्या वह अंतत: इसी अलिखित सामाजिक धारणा को बल देने में नहीं खप जायेगा कि महिला पुलिसकर्मी दूसरे अपराधों के अनुसन्धान या अन्य पुलिसकर्म में पुरुषों जितनी कारगर नहीं हो सकतीं ! डिजिटल जमाने की सरकारें स्वयं भी इनकी उपयोगिता को लेकर स्पष्ट नहीं हैं। देश के कुल चौदह हजार से अधिक पुलिस थानों में महिला थाने बमुश्किल पांच सौ से कुछ ऊपर हैं, जिनमें भी आधे से अधिक केवल दो राज्यों . तमिलनाडु और उत्तर प्रदेश-में हैं। स्पष्टता का अभाव शासन के हर स्तर पर है। हाल के अमेरिका दौरे में सिलिकॉन घाटी से प्रधानमन्त्री मोदी ने महिला सशक्तीकरण की दिशा में महिला पुलिस की संख्या में वृद्धि की नीति का भी जिक्र किया। हरियाणा में नवीनतम सजावटी महिला थाने निश्चित रूप से दिशाहीनता के प्रतीक हैं।

- विकास नारायण राय

गतांक की चीर-फ़ाड़

मज़दूर मोर्चा के 1-15 अक्टूबर 2015 के अंक में राष्ट्रीय, क्षेत्रीय व स्थानीय मुद्दों पर अनेक महत्वपूर्ण लेख पढने को मिले। 'खबरदार-इस बार काल्पनिक साक्षात्कार नेताजी सुभाष चन्द्र बोस' तथा 'हिन्दुत्व को मुल्क और इंसानियत के लिये सबसे बड़ा खतरा बताया नेताजी ने, लेखों द्वारा सुभाष बोस के हिन्दुत्व से ख़तरा सम्बन्धित विचार पाठकों के सामने लाकर अति महत्वपूर्ण कार्य किया गया है। सुभाष चन्द्र बोस के जो विचार आज तक फ़ाइलों में बन्द थे, वे ममता बनर्जी सरकार द्वारा 64 फ़ाइलें सार्वजनिक करने के बाद प्रकाश में आ गए है। इतिहास के शोध कर्ताओं के लिये ये 64 फ़ाइलें तथा अन्य 135 फ़ाइलें को अब भी केन्द्र सरकार के कब्ज़े में है भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन तथा सुभाष बोस के व्यक्तित्व के बारे में शोध करने के लिये अत्यंत महत्वपूर्ण है। इनसे सुभाष बोस की राजनीतिक विचारधारा स्पष्ट रूप से उज़ागर हो सकेगी। उदाहरणस्वरूप सुभाष बोस द्वारा बंगाल में 24 परगना युवा सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए दिया गया भाषण 64 फ़ाइलों में मौजूद पुलिसिया रिकार्ड में मिलता है जिसमें सुभाष ने बंगाली युवाओं को हिन्दू महासभा व संघ परिवार से देश को खतरे के बारे में सचेत करते हुए कहा था कि यदि इनका डटकर मुकाबला नहीं किया गया तो पूरा देश नफ़रत की आग में जलेगा और खून की नदियां बहेगी। सुभाष बोष की यह चेतावनी सत्य साबित हो रही है क्योंकि आज भी भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) व संघ परिवार द्वारा देश में साम्प्रदायिक तनाव व नफ़रत का माहौल बनाया जा रहा है। भाजपा द्वारा व्यक्ति विशेष की महान स्वतंत्रता सेनानी व देश भक्त के तौर पर महिमा की जाती है परंतु जब उनकी हिन्दुत्व विरोधी विचारधारा सामने आती है तो उस महान व्यक्ति की अवहेलना करने में देर नहीं लगती जैसे कि भगत सिंह के मामले में है। कांग्रेस का महात्मा गांधी के कारण सुभाष का विरोध तो जग जाहिर है। देश के लगभग हर राज्य में दबंग लोगों, नेताओं व पुलिस के गठजोड़ से आम आदमी की ज़मीन जायदाद हड़पने की घटनाएं अक्सर उज़ागर होती रहती हैं। न्यायपालिका की भूमिका भी उदासीनता पूर्ण रहती है। इसके अतिरिक्त न्याय प्रक्रिया भी इतनी जटिल व महंगी है जो पीड़ित व्यक्ति के लिये बहुत घातक है।

लेख 'पुलिस-नेता गठजोड़, उदासीन अदालतें, शिकार मकान-मालिक' द्वारा यह पूरा गोरखधंधा उज़ागर किया गया है।

शिक्षा से सरकारों ने अपना पल्ला पहले से ही झाड़ रखा है। शिक्षा को निजी हाथों में सौंप रखा है। निजी क्षेत्र में मुख्य उद्देश्य होता है मुनाफ़ा कमाना। वाजपेयी सरकार के मानव संसाधन विकास मंत्री मुरली मनोहर जोशी ने एक परिपत्र जारी कर देश के विश्वविद्यालयों तथा अन्य शिक्षण संस्थाओं को कहा गया था कि वे अपने संसाधन स्वयं जुटाएं। ऐसे में ये संस्थाएं मुनाफ़ा तो कमाएगी ही क्योंकि ये धर्मार्थ संस्थाएं तो नहीं है। दूसरी तरफ़ सरकारी शिक्षण संस्थाओं में पर्याप्त शिक्षकों की नियुक्ति नहीं की जाती। ठेके पर शिक्षक रखे जाते हैं और उनको वेतन भी कम दिया जाता है, जिससे शिक्षण कार्य में उनकी रूचि नहीं रह पाती। इसके अतिरिक्त शिक्षकों से शिक्षण कार्य के अतिरिक्त अन्य कार्य जैसे चुनाव कार्य, जनगणना आदि भी करवाए जातें हैं। इस संबंध में लेख 'शिक्षा से सरकार ने झाड़ा पल्ला' तथा 'अभिभावक एकता मंच चुनाव में भी उतर सकता है' समीचीन है। आवश्यकता इस बात की है कि सरकार पर दबाव बनाया जाय कि वह शिक्षा का व्यवसायीकरण बंद करे, सरकारी शिक्षण संस्थाओं में शिक्षा व्यवस्था को सुधारे, पर्याप्त संख्या में नियमित शिक्षकों की नियुक्ति करें, ठेकेदारी प्रथा समाप्त करें तथा शिक्षकों से गैर शिक्षण कार्य न करवाया जाए। यदि सरकारी शिक्षण संस्थाओं में शिक्षण कार्य का स्तर उत्तम होगा तो लोगों का रूझान स्वत: ही निजी संस्थाओं की बजाए सरकारी संस्थाओं की तरफ़ होगा।

लेख 'क्या अंधविश्वास का विरोध नहीं होना चाहिये' द्वारा अल्पसंख्यक और बहुसंख्यक राजनीति व इनके आतंकवाद के प्रति कांग्रेस व भाजपा सरकारों के दृष्टिकोण को उज़ागर किया गया है। कांग्रेस सरकार के मुकाबले में भाजपा सरकार के दौरान कट्टर हिंदुत्ववादी संगठन बेलगाम हो जाते हैं और अपने एजेंडा को लागू करने में उग्र व आक्रामक हो जाते हैं। उनके विरुद्ध कोई कार्यवाही नहीं की जाती और वे अदालतों से सबूतों के अभाव में रिहा हो जाते हैं क्योंकि तफ़्तीश व पैरवी इसी ढंग से की जाती है। उदाहरणस्वरूप सनातन संस्था के अधिकारियों व कार्यकर्ताओं द्वारा खुले में आक्रामक कार्यवाही करने और उनके द्वारा अपने विरोधियों को धमकाने के बावजूद उनके विरुद्ध कोई कार्यवाही नहीं की जाती। सरकार यह कहकर कि उनके विरुद्ध प्रतिबंध नहीं लगाया जा सकता क्योंकि उनके विरुद्ध पर्याप्त सबूत नहीं है उनकी गतिविधियों को बढावा देती है। यह सर्वव्यापक मान्यता है कि पूंजीवादी समाज में पूंजीपति वर्ग के परिवार के सदस्यों को अपनी जीविका चलाने के लिये कठोर श्रम नहीं करना पड़ता। ललित मोदी भी कोई अपवाद नहीं हैं। वह एक बहुत बड़े व्यापारिक समूह के संस्थापक गूजरमल मोदी का पोता है। उसके कारनामों और सरकारों से गठजोड़ का लेख 'ललित मोदी: होनहार विरवान के होत चिकने पात' में पूरा पर्दाफ़ाश किया गया है।

प्रकाशित पोस्ट 'एक समय एक हिटलर था' में वर्णित हिटलर के जीवन व कार्यों की लगभग सभी विशिष्टताएं नरेन्द्र मोदी से मिलती-जुलती हैं। हिटलर की शादी नहीं हुई थी जबकि नरेन्द्र मोदी ने शादी करके अपनी पत्नी को छोड़ दिया था। हिटलर ने बचपन में पेंट करने व रंग बेचने का काम किया था जबकि मोदी के अनुसार उन्होंने चाय बेचने का काम किया था। इसके अतिरिक्त मोदी को फ़ोटो के साथ-साथ सेल्फ़ी खिंचवाने का शैक है। शेष सभी विशेषताएं दोनों में समान हैं।

नरेन्द्र मोदी व अमितशाह के बीच वार्तालाप के दौरान संयुक्त राष्ट्र की सुरक्षा परिषद की स्थाई सदस्यता की सीट जीतने के लिये दंगे करवाने संबंधित कार्टून द्वारा देश में चुनाव के मद्देनज़र करवाए जा रहे साम्प्रदायिक दंगों पर सटीक कटाक्ष किया गया है। शेष अन्य सभी लेख उच्च स्तरीय व प्रशंसनीय है।

-प्रो. जुगल किशोर गुप्ता